P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-10* June- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

# जलवायु परिवर्तन एवं सतत् विकास

**जगजीत सिंह कविया**
सहायक आचार्य,
समाजशास्त्र विभाग,
राजकीय लोहिया महाविद्यालय,
चूरू, राजस्थान

**रवीन्द्र कुमार**
सहायक आचार्य,
भूगोल विभाग,
राजकीय लोहिया महाविद्यालय,
चूरू, राजस्थान

**सारांश**

आज की तेज रफ्तार जिन्दगी और अनियन्त्रित विकास की प्रक्रिया के कारण हमारा पर्यावरण एक ऐसे खतरनाक मोड़ पर पहुंच गया है, जिसका कष्ट भविष्य में सम्पूर्ण विश्व पर टूटने वाला है। इसके समाधान हेतु सतत् विकास ही एकमात्र रास्ता है जिसको अपनाकर ना केवल हम सुरक्षित रह पाएंगे वरन् आने वाली पीढ़ियों के जीवन को सुरक्षित रख पाएंगे। सतत् विकास की इस अवधारणा के महत्त्व को दूसरे पृथ्वी सम्मेलन (जोहान्सबर्ग, 2002) में स्वीकारा जा चुका है। भारत ने भी 2008 में जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना को अन्तिम रूप दिया था। इसका उद्देश्य पर्यावरण में हो रहे बदलावों से निपटने के लिए आवश्यक रणनीति बनाना है।

अतः आज जीवन के हर क्षेत्र में हमें अनावश्यक ऊर्जा खर्च को रोक कर नियन्त्रित व टिकाऊ विकास को अपनाए जाने की सख्त आवश्यकता है, इस हेतु अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं स्थानीय स्तर पर मिल–जुल कर प्रयास करने व संवाद करने की आवश्यकता है, जिससे पर्यावरण के साथ–साथ हमारा भविष्य भी सुरक्षित रह पाएगा। सतत् विकास की सबसे बड़ी चुनौति आर्थिक विकास तथा पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन बनाना है क्योंकि इसी संतुलन पर मानव का अस्तित्व टिका हुआ है।

**मुख्य शब्द :** वैश्वीकरण, पारिस्थितिकी, ग्रीन हाउस गैस, ग्लोबल वार्मिंग, सतत् विकास, पर्यावरण संरक्षण।

**प्रस्तावना**

विकास मानव को उत्तम जीवनशैली प्राप्त करने के लिए सक्षम बनाने वाली अनवरत प्रक्रिया है। प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग से मानव का भरण–पोषण होता आया है परन्तु प्रकृति की पुनरूत्पादन क्षमता सीमित है।

पिछले कुछ दशकों में प्राकृतिक संसाधनों के अतिदोहन के परिणामस्वरूप पर्यावरण एवं मानव जाति पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। इसी के परिणामस्वरूप जलवायु परिवर्तन जैसी समस्या भी उत्पन्न हुई।

जलवायु का मानव जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। मानव का जीवन एवं उसकी क्रियाएं जलवायु से स्पष्टतः प्रभावित होती है। यह भी सत्य है कि विश्व की जलवायु कभी भी स्थिर नहीं रही है। पृथ्वी की उत्पत्ति से लेकर आज तक इसमें लगातार परिवर्तन होते रहे हैं। कभी पृथ्वी का तापमान कम हो जाता है और हिम की परतें इसके धरातल पर आच्छादित हो जाती हैं, तो कभी इसका तापमान बढ़ जाता है और हिम पिघलने लगती है।

लेकिन पिछले कुछ वर्षों में वैश्विक जलवायु तीव्रता से परिवर्तित हुई है। इस परिवर्तन में मनुष्य की अन्धी विकास की दौड़ का सबसे बड़ा हाथ है। अपने स्वार्थ के लिए हमने जल, मृदा, खजिन एवं वन संसाधनों का इतना तेजी से दोहन किया है कि समूची पारिस्थितिकी ही असन्तुलित हो गई है। नगरीकरण, औद्योगीकरण, कोयले पर आधारित तापविद्युत गृह, तकनीकी तथा परिवहन क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन, मानव जीवन के रहन–सहन में परिवर्तन (विलासितापूर्ण जीवनशैली के कारण एयर कंडीशनर, रेफ्रिजरेटर, परफ्यूम आदि का वृहद् पैमाने पर उपयोग), आधुनिक कृषि में रासायनिक खादों का अन्धाधुन्ध प्रयोग आदि कुछ ऐसे प्रमुख कारण हैं, जिन्होंने जलवायु परिवर्तन में अहम भूमिका अदा की है।

आने वाली पीढ़ियों को हम एक ऐसी पारिस्थितिकी सौंपने जा रहे हैं, जो अथक प्रयासों के बावजूद भी सन्तुलित नहीं की जा सकेगी। बढ़ते वैश्विक तापमान, खत्म होते खजिन एवं वन संसाधन, पिघलते ग्लेशियर तथा मृत होती नदियों ने समूचे जीव जगत् के लिए खतरे की घंटी बजा दी है। ऐसे में सतत् विकास की अवधारणा को पुनः महत्त्व प्राप्त हुआ है तथा बदलती हुई वैश्विक जलवायु को रोकने में इसकी महती भूमिका को स्वीकारा जाने लगा है। सतत्

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-10* June- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

विकास सामाजिक–आर्थिक विकास की वह प्रक्रिया है, जिसमें पृथ्वी की सहनशक्ति के अनुसार विकास की बात की जाती है।

**अध्ययन उद्देश्य**

1. शोध पत्र का उद्देष्य, वर्तमान प्ररिप्रेक्ष्य में जलवायु परिवर्तन के उभरते प्रतिमानो को अभिज्ञात करना।
2. कार्बन उर्त्सजन की विभिन्न देषो में मात्रा ज्ञात करना एवं उसके वैष्विक प्रभावो को रेखांकित करना।
3. पर्यावरण के समुख इन वैष्विक संकटो से उबरने के लिए सतत् विकास के प्रतिमान प्रस्तुत करना।

**साहित्यावलोकन**

एस.कोहेन (1990) ने जलवायु परिवर्तन के प्रभावो पर लिखते हुए कहा है कि सतत् विकास के द्धारा हि इसके प्रभावो को कम किया जा सकता है।

टी.पोटहास्ट व साइमन मीसच (2012) ने अपनी पुस्तक क्लाइमेन्ट चैन्ज एण्ड सस्टेनेबल डवलपमेन्ट में कृषि के क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन के प्रभावो पर विस्तार से बताया है।

रोड्रिग्स (2018) ने सतत् विकास के रास्ते जलवायु परिवर्तन के साथ सामंजस्य का वर्णन अपने लेख में किया है। आई.पी.सी.सी. संस्था ने जलवायु परिवर्तन एवं सतत् विकास के मुद्दे पर सर्वाधिक कार्य किया है तथा समय–समय पर अपनी रिपोर्टस प्रकाषित कर जलवायु परिवर्तन के विभिन्न आयामों के बारे मे विस्तार से लिखा है।

**जलवायु परिवर्तन के कारण**

विश्वभर में हो रहे जलवायु परिवर्तन के मूल में वैश्विक तापमान में हो रही वृद्धि है। 19वीं शताब्दी में पृथ्वी का औसत तापमान 2$^0$ सेल्सियस बढ़ गया है, जिसका प्रमुख कारण ब्व$_2$ व अन्य मनुष्य जनित उत्सर्जन हैं। सर्वाधिक 17 गर्म वर्षों में 16 वर्ष 2001 के बाद के हैं। ;छव्।।द्ध ६ दुनिया के सभी मनुष्य मिलकर 6 अरब मैट्रिक टन कार्बन सालाना वायुमण्डल में छोड़ रहे हैं, जिसकी वजह से ब्व$_2$ आदि हरितगृह गैसों की वातावरण में सान्द्रता बढ़ रही है, जिसके कारण तापमान में वृद्धि हो रही है। जिसे ग्लोबल वार्मिंग कहा जाता है।

**वैश्विक ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन (2014)**

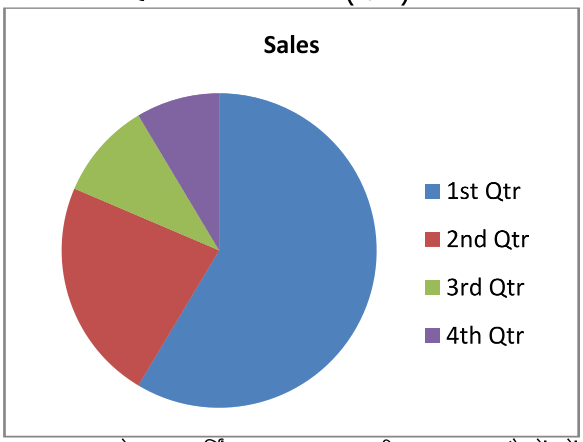


ग्लोबल वार्मिंग का कारण ग्रीन हाऊस गैसों में निरन्तर हो रही वृद्धि है। इनमें कार्बन डाईऑक्साइड सबसे महत्वपूर्ण गैस है। वायुमण्डल में इसका स्तर सामान्य रूप से बना रहता है। लेकिन पिछले कुछ दशकों से जीवाश्म ईंधनों के अधिक उपयोग के कारण वायुमण्डल में इसकी मात्रा निरन्तर बढ़ती जा रही है। कार्बन डाईऑक्साइड के अलावा वायुमण्डल में मिथेन ;ब्भ्$_4$द्ध, क्लोरो–फ्लोरो कॉर्बन ;ब्थ्ब्द्ध, नाइट्रस ऑक्साइड ;छ$_2$व्द्ध जैसी गैसों का सान्द्रण भी बढ़ता जा रहा है। ये गैसें पृथ्वी के चारों ओर एक आवरण बना लेती हैं, जिसके कारण सौर विकिरण प्रवेश तो कर लेती हैं लेकिन वापस नहीं जा पाती हैं। परिणामस्वरूप पृथ्वी तथा वायुमण्डल दोनों का ताप बढ़ता है।

आई.पी.सी.सी. (इन्टर गवर्नमेन्ट पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज) के चतुर्थ मूल्यांकन रिपोर्ट के अनुसार पृथ्वी का औसत तापमान, जो वर्तमान में 15.8 डिग्री सेल्सियस है, वह 21वीं शदी के अन्त तक 21 डिग्री सेल्सियस के आस–पास हो जाएगा।

वर्ल्डवाडट फंड फॉर नेचर (डब्ल्यू.डब्ल्यू.एफ.) की एक शोध आधारित रिपोर्ट के अनुसार निरन्तर हो रही तापमान में वृद्धि से हिमालय के ग्लेशियर हर साल 10 से 25 मीटर की दर से सिकुड़ रहे हैं। ये ग्लेशियर जल आपूर्ति के सतत् स्रोत होने के साथ–साथ तापमान को नियन्त्रित रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, इस तरह मौसम चक्र को सन्तुलित रखने में ये महत्त्वपूर्ण कारक हैं। लेकिन इन ग्लेशियरों के पिघलने से समुद्र का जल स्तर बढ़ रहा है। आई.पी.सी.सी. की एक अन्य रिपोर्ट के अनुसार यदि समुद्र के जल स्तर में 1 से 1.2 फीट तक वृद्धि होती है तो मुम्बई, न्यूयार्क, पेरिस, लन्दन, मालदीव, हालैण्ड और बांग्लादेश के अधिकांश भूखण्ड समुद्र में जलमग्न हो सकते हैं। ग्रीन हाऊस गैसों का प्रभाव वर्ष 2040 तक दो गुना एवं इस सदी के अन्त तक तीन गुना होने की सम्भावना है।

वैश्विक ताप वृद्धि में कार्बन डाईऑक्साइड का योगदान 55 प्रतिशत, मिथेन का 20 प्रतिशत, क्लोरोफ्लोरो कार्बन रसायनों का 6 प्रतिशत, नाइट्रस आक्साइड का 5 प्रतिशत तथा ओजोन का 2 प्रतिशत योगदान है। प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष हरितगृह का उत्सर्जन संयुक्त राज्य अमेरिका में 20 टन से अधिक है, वहीं रूस 11.71 टन, जापान 9.87, यूरोपीय संघ 9.4, चीन 3.6 तथा भारत 1.2 टन प्रति व्यक्ति गैसों का उत्सर्जन करते हैं।

आई.पी.सी.सी. की रिपोर्ट के अनुसार औद्योगिक क्रान्ति से पूर्व वायुमण्डल में कॉर्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा 190 पी.पी.एम. (पार्ट्स पर मिलियन) थी जो वर्ष 1880 में 290 पी.पी.एम. तथा 2100 ई. तक 730 से 1020 पी.पी.एम. के खतरनाक स्तर तक पहुंचने की आशंका है। ग्रीन हाऊस गैसों तथा उससे तापमान में हो रही इस बेतहाशा वृद्धि का जलवायु पर प्रभाव पड़ना निश्चित है। इसके लक्षण भारी वर्षा, बाढ़, बर्फबारी, सूखा, वनस्पति और जीवों के क्रिया–कलापों में परिवर्तन, ऋतुओं का समय–पूर्व आगमन आदि रूपों में दिखाई देने लगा है।

नीचे दिये गये आरेख में वर्ष 2014 के कार्बन उत्सर्जन की व्याख्या की गई है। चीन विष्व में कार्बन का सर्वाधिक उत्सर्जन करता है। यूरोपीय देशों के उत्सर्जन में लगातार कमी आ रही है। रूस, जर्मनी, यू.के., इटली, फ्रांस आदि देशों का उत्सर्जन वर्ष 1990 से 2003 तक

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-10* June- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

कम हुआ है। वैश्विक स्तर पर भी कार्बन का उत्सर्जन कम हुआ है।

**कार्बन डाई ऑक्साइड उत्सर्जन में विभिन्न देशों की सहभागिता (2014)**

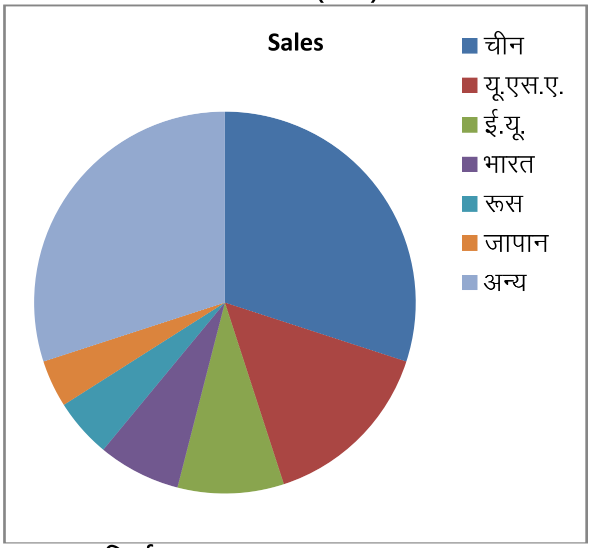


**जलवायु परिवर्तन का प्रभाव**

ग्लोबल वार्मिंग के कारण जलवायु में हो रहे प्रमुख बदलाव निम्न प्रकार के हैं–

1. ग्लोबल वार्मिंग के कारण दुनिया भर में ग्लेशियरों के पिघलने की दर आश्चर्यजनक रूप से बढ़ रही है।
2. जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप भारत के उड़ीसा, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक, महाराष्ट्र, गोवा, गुजरात तथा पश्चिम बंगाल राज्यों के तटीय क्षेत्र जलमग्नता के शिकार होंगे। समुद्र में जलस्तर की वृद्धि के परिणामस्वरूप भारत के लक्षद्वीप तथा अण्डमान निकोबार द्वीपों का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। इसके साथ ही इससे विस्थापन की समस्या भी उत्पन्न होगी।
3. जलवायु परिवर्तन के कारण विश्वभर के बारिश के प्रतिरूप में व्यापक परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं। ग्लोबल वार्मिंग के कारण प्रकृति में बदलाव आ रहे हैं, कहीं भारी वर्षा तो कहीं सूखा, कहीं लू तो कहीं ठण्ड, कहीं बर्फ की चट्टानें टूट रही हैं तो कहीं समुद्री जल स्तर में बढ़ोतरी हो रही है। वैश्विक जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप बाढ़, भूस्खलन तथा भूमि अपरदन जैसी समस्याएं पैदा होंगी। ताजे जल की आपूर्ति पर गम्भीर प्रभाव पड़ेंगे। जलवायु परिवर्तन से भारत में भी वर्षा के वितरण में असमानता बढ़ेगी इससे कृषि उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। इसके परिणामस्वरूप गन्ना, मक्का, ज्वार, बाजरा, अरहर, चना, मूंग, उड़द, मसूर के उत्पादन में वृद्धि होगी, जबकि इसके विपरीत गेहूं, धान, जौ, आलू, सरसों, अलसी के उत्पादन में गिरावट दर्ज होगी। खाद्यान्न उत्पादन में कमी से भूखमरी और कुपोषण की समस्या उत्पन्न होगी। दुनिया में सबसे अधिक वर्षा का रिकॉर्ड बनाने वाले चेरापूंजी में अब स्थानीय लोगों को पीने का पानी खरीदना पड़ रहा है।
4. बढ़ते तापमान एवं बदलते वर्षा के प्रतिरूप का कृषि पर सीधा–सीधा प्रभाव पड़ेगा। कहीं पर कृषि योग्य भूमि का दायरा सिमटेगा तो कहीं इसका विस्तार होगा। बढ़ते तापमान के कारण भूमि की नमी में कमी आ रही है जिससे मिट्टी की उर्वरा क्षीण हो रही है। इससे खाद्य सुरक्षा पर सीधा प्रभाव पड़ेगा।
5. बदलती जलवायु मानव समेत सम्पूर्ण जीव–जगत एवं वनस्पतियों के संकट का कारण है। कार्बन–डाईऑक्साइड की बढ़ती मात्रा के चलते समुद्रों का जल अम्लीय होता जा रहा है। इसके कारण समुद्री जीवों पर खतरा मण्डरा रहा है।
6. एक रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2080 तक 3.20 अरब लोगों को पानी उपलब्ध नहीं होगा, 60 करोड़ लोग भूख से मरेंगे, खासकर इससे अल्पविकसित देशों हो हानि होगी।
7. जलवायु परिवर्तन से समुद्र के तटीय क्षेत्रों में पाई जाने वाली वनस्पतियों पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा, ये दलदली क्षेत्र समुद्र जीवों के प्रजनन तथा तट को स्थिरता प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस जैव–विविधता के क्षरण के परिणामस्वरूप पारिस्थितिकी असन्तुलन का खतरा बढ़ेगा।
8. जलवायु में उष्णता के कारण उष्ण कटिबन्धीय वनों में आग लगने से घटनाओं में वृद्धि होगी परिणामस्वरूप वनों के विनाश के कारण जैव–विविधता का ह्रास होगा।
9. भारत भूमि को भले **'शस्य श्यामला'** कहा गया हो, लेकिन पर्यावरण निष्पादन सूचकांक (ई.पी.आई., 2010 – यह सूचकांक संसाधनों को बचाए रखने जैसे पहलुओं के आधार पर किया गया) के अनुसार भारत का स्थान 123वां है, जबकि चीन 121 वें स्थान पर, प्रथम स्थान पर आइसलैण्ड है।

**सतत् विकास – एक हल**

सतत् विकास से तात्पर्य संसाधनों के उपयोग के ऐसे पैटर्न से है जिसमें मानव आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संसाधनों का प्रयोग पर्यावरण तथा आने वाली पीढ़ियों को ध्यान में रखकर किया जाता है।

विश्व पर्यावरण व विकास कमीशन की रिपोर्ट (डब्ल्यू.सी.ई.डी.–1987) ने सतत् विकास की अवधारणा को सर्वाधिक प्रसारित किया। जिस गति से पर्यावरणीय संकट ने मानव सभ्यता के समक्ष अस्तित्व का प्रश्न खड़ा किया जिससे एक ऐसी अवधारणा की आवश्यकता महसूस की जाने लगी जिसके अन्तर्गत संसाधनीय उपलब्धता एवं उपभोग में साम्यता की जा सके। ऐसी ही कुछ विकासपरक् धारणाओं ने सतत् विकास की अवधारणा को रेखांकित किया।

जलवायु परिवर्तन को रोकने का सर्वोत्तम उपाय है सतत् विकास। यह सही है कि मानव के सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान के लिए औद्योगिक एवं तकनीकी विकास आवश्यक है। यह भी सही है कि आर्थिक एवं तकनीकी विकास का चक्र रोका नहीं जा सकता क्योंकि बढ़ती हुई जनसंख्या के भरण–पोषण के लिए तथा सर्वांगीण विकास

के लिए तकनीकी विकास का सहारा लेना ही पड़ेगा। उदाहरण के लिए विश्व में खेती योग्य जमीन में कोई वृद्धि नहीं की जा सकती है। इसके विपरीत बढ़ते नगरीकरण एवं औद्योगिकरण के चलते उसके क्षेत्रफल में कमी आती जा रही है। ऐसे में बढ़ती जनसंख्या के खाद्यान्न की आवश्यकता के लिए नवीनतम तकनीक का सहारा लेना ही पड़ेगा। लेकिन यह तकनीक पर्यावरणीय दृष्टि से अनुकूल हो तो इससे दोनों उद्देश्य प्राप्त हो जाएंगे। कृषि की उत्पादकता में वृद्धि हेतु रसायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के बदले जैव उर्वरकों के उपयोग पर जोर देना चाहिए। सिंचाई की परम्परागत तकनीक से मृदा में जलजमाव एवं लवणीयता की समस्या उत्पन्न हो रही है। इससे वायुमण्डल में मिथेन गैस (दलदली भूमि के कारण) की मात्रा में वृद्धि होती है। इससे बचने के लिए ड्रिप एवं स्प्रिंकल सिंचाई, एनीकट सिंचाई जैसी पद्धतियों को अपनाया जा सकता है, जो पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल हो। वायुमण्डल की कॉर्बन डाई–ऑक्साइड कम करने हेतु संरक्षण कृषि को अपनाए जाने पर जोर देना चाहिए। इसी प्रकार मृदा की उर्वरता, फसल की बीमारियों से रक्षा तथा मृदा में कार्बन की मात्रा बढ़ाने के लिए फसल चक्र में परिवर्तन किया जाना चाहिए।

फसलों की खरपतवारों से रक्षा के लिए रसायनिक खादों के स्थान पर अन्तर्वर्ती फसलें उगानी चाहिए। उदाहरणस्वरूप मक्के की फसल के साथ लोबिया लगाने से मक्के के खरपतवारों की वृद्धि रूकेगी, इस प्रकार अरहर की पंक्तियों में ज्वार उगाने से अरहर में उकठा रोग कम लगता है।

ग्रीन हाऊस प्रभाव को रोकने के लिए जैव ईंधन (बायो फ्यूल) फसलें जैसे जटरोफा, मीठा ज्वार व मक्का के उपयोग की काफी सम्भावनाएं हैं।

वातावरण में उत्सर्जित होने वाली मिथेन का ज्यादातर भाग 'जल भराव रोपण पद्धति' वाले धान की खेती से ही निकलती है, इसके स्थान पर एयरोबिक पद्धति (तैयार खेत में धान की सीधी बुआई) से बुआई की जानी चाहिए। इसी प्रकार पंजाब, हरियाणा व देश के अन्य प्रान्तों में धान व गेहूं की कटाई के उपरान्त बचे हुए भूसे को जलाने की परम्परा है, इसके स्थान पर इस भूसे से जैव खाद बनाने में तथा मशरूम उत्पादन में इसका उपयोग किया जा सकता है।

इसी प्रकार से वनों को सुरक्षित रखने के लिए बायो ईंधन की तलाश की जानी चाहिए। यदि वृक्ष काटना आवश्यक हो तो काटे गये वृक्षों के बराबर की संख्या में नवीन वृक्षों का रोपण करना चाहिए। इससे मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति भी हो जाएगी तथा पर्यावरण भी सुरक्षित रहेगा।

पृथ्वी को बचाने के लिए हमारे द्वारा घरेलू स्तर पर किए गए छोटे–छोटे प्रयास मिलकर बड़ा फर्क ला सकते हैं जैसे ब्लब के स्थान पर सीएफएल का प्रयोग, रेफ्रिजरेटर की रफ्तार को धीमा रखना, दीवारों पर हल्के रंगों का प्रयोग आदि।

सार रूप में कहा जा सकता है कि आज की तेज रफ्तार जिन्दगी और अनियन्त्रित विकास की प्रक्रिया के कारण हमारा पर्यावरण एक ऐसे खतरनाक मोड़ पर पहुंच गया है, जिसका कष्ट भविष्य में सम्पूर्ण विश्व पर टूटने वाला है। इसके समाधान हेतु सतत् विकास ही एकमात्र रास्ता है जिसको अपनाकर ना केवल हम सुरक्षित रह पाएंगे वरन् आने वाली पीढ़ियों के जीवन को सुरक्षित रख पाएंगे। सतत् विकास की इस अवधारणा के महत्त्व को दूसरे पृथ्वी सम्मेलन (जोहान्सबर्ग, 2002) में स्वीकारा जा चुका है। भारत ने भी 2008 में जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना को अन्तिम रूप दिया था। इसका उद्देश्य पर्यावरण में हो रहे बदलावों से निपटने के लिए आवश्यक रणनीति बनाना है।

अतः आज जीवन के हर क्षेत्र में हमें अनावश्यक ऊर्जा खर्च को रोक कर नियन्त्रित व टिकाऊ विकास को अपनाए जाने की सख्त आवश्यकता है, इस हेतु अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं स्थानीय स्तर पर मिल–जुल कर प्रयास करने व संवाद करने की आवश्यकता है, जिससे पर्यावरण के साथ–साथ हमारा भविष्य भी सुरक्षित रह पाएगा। सतत् विकास की सबसे बड़ी चुनौति आर्थिक विकास तथा पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन बनाना है क्योंकि इसी संतुलन पर मानव का अस्तित्व टिका हुआ है।

**सन्दर्भ ग्रंथ सूची**

1. *Cohen S,Rothman D (1998) Climate change and sustainable development : towards dialogue, global enviromental change, Volume 8, issue 4, pg 341- 371*
2. *Jayant Sathaye, PR Shulka and N.H. Ravindranath (2006)- Climate change, Sustainable Development and India: Global and National concerns. - Current science, Vol. 90 No. 3.*
3. *International policy network (2004) - Climate change and sustainable development - A blueprint from the suitable development network.*
4. *Gary W. Yohe, Rodel D. Lasco (2007) - Perspectives on climate change and sustainability - Cambridge University Press, UK*
5. *Our common future: Report of the world commission on environment and development (WCED) - Oxford University Press, New York, 1987.*
6. *Global environmental outlook - United Nations Environment Programme (UNEP) - Oxford University Press, 1999.*
7. *Rodriguez R S et al (2018) sustainable development goals and climate change adaption in cities, nature climate change.*
8. *IPCC fourth (2007) and Fifth (2014) assessment report.*
9. *योजना – अप्रैल 2010*
10. *योजना – दिसम्बर 2015*
11. *कुरूक्षेत्र – जनवरी 08, मार्च 2010*